Research Guru
Online Journal of Multidisciplinary Subjects (ISSN : 2349-266X)
UGC Approved Journal No. 63726
Impact Factor: 4.081
Volume-12, Issue-3, December-2018 www.researchguru.net

'काव्य निर्णय' में प्रतिपादित शब्द–शक्ति विवेचन का शास्त्रीय अध्ययन

डॉ0 अनुपमा वर्मा
प्रवक्ता, हिंदी विभाग, मैथोडिस्ट गर्ल्स पी.जी. कॉलेज, रूड़की, 247667, हरिद्वार उत्तराखण्ड
भारत kr651981@gmail.com मो0नं0 7895704419

संक्षेपिका
आचार्य भिखारी दास ने अपने ग्रंथ 'काव्य निर्णय' के दूसरे उल्लास में जिसका नाम ''पदार्थ निर्णय'' है, उसमें शब्द शक्ति का विवेचन किया हैं। भिखारी दास ने शब्द शक्ति जैसे दुरूह विषय को बोधगग्य एवं स्पष्ट करने का भरसक प्रयत्न किया है। दास जी ने मम्मट से प्रभाव ग्रहण करने के पश्चात् भी मौलिकता का परित्याग नहीं किया है। इन्होंने पद (शक्ति) तीन माने है। वाचक, लाक्षणिक एवं व्यंजक। तीनों ही शब्द शक्ति का भरपूर प्रयोग किया है। आचार्य भिखारी दास द्वारा कृत 'काव्य निर्णय' में पद शब्द को इस प्रकार उपन्यस्थ किया गया है।

Keyword–काव्य निर्णय, प्रतिपादित, शास्त्रीय, मौलिकता, शब्दशक्ति, व्यंजक।

आचार्य भिखारीदास ने अपने ग्रंथ काव्य निर्णय के दूसरे उल्लास में जिसका नाम ''पदार्थ निर्णय'' है शब्द शक्ति का विवेचन किया है। दास ने शब्द शक्ति जैसे दुरूह विषय को बोधगम्य और स्पष्ट करने का भरसक प्रयत्न किया है। मम्मट से प्रभाव ग्रहण करके भी दास ने मौलिकता का परित्याग नहीं किया है। पद (शब्द) तीन माने जाते हैं। (1) वाचक (2) लाक्षणिक और (3) व्यंजक। आचार्य भिखारी दास कृत 'काव्य निर्णय' ग्रंथ में पद (शब्द) को निम्नवत् उपन्यस्त किया गया है–''पद वाचक अरु लाच्छनिक व्यंजक तीनि विधान।''[1]

काव्य में संस्कृत के आचार्यों ने भी पद (शब्द) यही तीन प्रकार माने हैं।[2] यद्यपि किसी–किसी के मत से 'तात्पर्य' भी एक प्रकार का अर्थ है[3] जो विद्वानों द्वारा विशेष रूप से मान्य नहीं हुआ है।

1– वाचक पद (अभिधा)–मम्मट के मतानुसार संकेतिक अर्थ जाति, गुण क्रिया और यदिच्छा के भेद से 4 प्रकार का होता है।[4]

''संकेतितश्चतुर्भेदो जात्यादिजातिरेव का।''

दास जी तीनों अर्थों का विवेचन करते हुए कहते हैं कि वाचक पद जाति, यदिच्छा, गुण और क्रिया द्वारा निश्चित होता है जैसे–

''जाति जदिच्छा गुन क्रिया नाम जु चारि प्रमान।
सबरी संज्ञा जाति गनि वाचक कहै सुजान।।[5]

कृष्ण के यदुनाथ कान्ह श्याम और कंसारि के चार नाम क्रमशः जाति, यदिच्छा, गुण तथा क्रिया के कारण हैं–

''जाति नाम जदुनाथ अरु कान्ह जदिच्छा धारि।
गुन ते कहिए श्याम अरु क्रिया नारम कंसारि।।''[6]

अर्थात् दास का यह मत मम्मट के मत के अनुसार ही है। दास का मानना है कि गुण का निश्चित रूप, रंग, गंध, रस तथा स्थायी धर्मो द्वारा होता है और इनसे संकेतित अर्थ को वाच्यार्थ कहते हैं।

''रूप रंग रस गंध गनि औरहु निश्चल धर्म
इन सबको गुन कहत है गुनि राखौ यह मर्म।।
ऐसे शब्दह सो फुरै संकेतित जो अर्थ।
ताको वाच्यारथ कहै सज्जन सुमति समर्थ।।''[7]

अभिधा–

अनेकार्थक वाले शब्द से निश्चित अर्थ की अभिव्यक्ति हो उस वाच्यार्थ को अभिधा शक्ति कहते हैं।

''अनेकार्थहु में एक अर्थ की व्यक्ति।
तेहि वाच्यारथ को कहैं सज्जन अविधा सक्ति।[8]

इस क्षेत्र में भी दास ने मम्मट के मत को ही स्वीकार किया है, क्योंकि मम्मट के अनुसार जिस व्यापार द्वारा मुख्यार्थ का बोध हो, उसे अभिधा कहते हैं, द्रष्टव्य है :–

''स मुख्योऽर्थस्तत्र मुख्यो व्याथाशेऽस्याभिधोच्यते'' ।9

इसका व्यापार इन सम्बंधों से प्रकट होता है–

संयोग, असंयोग, साहचर्य, विरोध, अर्थ, प्रकरण, लिंग अन्य शब्द की सन्निधि, सामर्थ्य, औचित्य, देशबल, काल, स्वरादिक फेर तथा अभिनयादि को भिखारी दास जी ने उदाहरणों द्वारा स्पष्ट किया है–

औचित्य से–

''कहूँ उचित से पाइए, एक अर्थ की रीति।
तरु पै 'द्विज' बैठयों कहे, होत विहंग प्रतीति''।।[10]

स्वर के फेर से–

''कहूं स्वरादिक फेर ते एक ही अर्थ प्रसंग।
वाजी भली सु वासुरी, वाजी भलों तुरंग''।।

आचार्य भिखारी दास का विभाजन भर्तृहरि के आधार पर जिसका उल्लेख 'काव्यप्रकाश' में हुआ है–

''संयोगो विप्रयोगश्च साहचर्य विरोधिता।
अर्थः प्रकरणं लिंगं शब्दस्यान्वयस्य सन्निधिः।
सामर्थ्यमौचितो देशः कालो व्यक्तिः स्वरादयः।
शब्दार्थस्यानबच्छेदे विशेषस्मृतिहेतवः।।[11]

परन्तु उन्होंने भर्तृहरि के विप्रयोग के स्थान या असयोग तथा व्यक्ति के स्थान पर अभिनयादि नाम रख दिया।

जयदेव ने अभिधा के 6 भेद माने हैं।[12] जाति, गुण, क्रिया वस्तुयोग, संज्ञा व निर्देश जिनमें से प्रथम चार के उल्लेख दास जी ने वाचक लक्षण के अन्तर्गत किया है।

अभिधा शक्ति को दास जी ने और भी स्पष्ट करते हुए लिखा है कि अभिधा शक्ति वहाँ होती हैं, जहाँ अभिप्रेतार्थ एक ही होता है–

''जामें अभिधा शक्ति करि अर्थ न दूजो कोई।
वहै काव्य कीन्हे वनै नातो मिश्रित होई''।।[13]

उदाहरणार्थ–

''मोर पक्ष को मुकुट सिर, उर तुलसी दल माल।
जमुना तीर कदम्ब ढिग मै दिख्यौ नंदलाल''।।[14]

यहाँ पर मोर पक्ष, तुलसी दल, माल, तीर, कदम्ब, नंद और लाल शब्द यद्यपि अनेकार्थी हैं, किन्तु यहाँ इसमें एक ही अर्थ की अभिधा है।

लक्षणा–

मम्मट ने लक्षणा की परिभाषा करते हुए कहा है कि जहाँ शब्द के द्वारा मुख्य अर्थ की उत्पत्ति (सिद्धि) न हो परन्तु उससे सम्बंध बना रहे अथवा किसी विशेष अर्थ के बोध के शब्द रूढ़ अथवा प्रसिद्ध हो गया हो या किसी प्रयोजन के कारण शब्द अपने मुख्य अर्थ को छोड़ किसी अन्य अर्थ को लक्षित कराता हो तो उस अर्थ प्रतीति के व्यापार का नाम लक्षणा है–

''मुख्यार्थवाधे तद्योगे रूढ़ितोऽथ प्रयोजनात्।
अन्योऽर्थो लक्ष्यते यत्सा लक्षणारोपिता क्रिया'' ।।[15]

लेकिन आचार्य भिखारी दास के अनुसार लक्षणा की परिभाषा इस प्रकार है जहाँ मुख्यार्थ की बाधा से लाक्षणिक प्रतीति होती हो तथा उसमें रूढ़ि या कोई प्रयोजन निहित हो उसे लक्षणा कहते हैं। यथा–

''मुख्य अर्थ के बाध ते शब्द लाच्छनिक होत'' ।[16]

मुकुल भट्ट ने अपने 'अभिधावृत्तिमातृका' में स्पष्ट लिखा है कि लक्षणा शक्ति को अर्थानुसन्धान से जानी जाती है अर्थात् इसका शब्द में आरोप किया जाता है।[17] महाभाष्य में मुख्यार्थ और लक्ष्यार्थ चार प्रकार की कही गयी है। तात्स्थ्य, ताद्धर्म्य, समीप्य और साहचर्य।[18]

जयदेव ने 'चन्द्रालोक' में कहा है कि जहाँ मुख्य अर्थ से तात्पर्य की प्रतीति न होने पर मुख्य अर्थ से सम्बंध रखने वाले अन्य अर्थ का बोध हो वहाँ लक्षणा होती है और जहाँ लोक प्रसिद्धि के कारण हो वहाँ निरुढ़ा तथा जहाँ किसी प्रयोजन से लक्ष्यार्थ ज्ञान हो वहाँ प्रयोजनवती लक्षणा होती है।

''मुख्यार्थस्याविवक्षयां पूर्वाऽवाचो च रूढ़ितः।
प्रयोजनाच्च सम्बद्धं वदन्ती लक्षणा मता'' ।।19

गौतम के न्याय दर्शन में लक्षणा का निर्देश इस प्रकार है–

'सहचरण–स्थान–तददृश्य–वृत्त–मान–धारणा–सामीप्य–योग–साधना–घिपत्येभ्योंब्राहाणमं च–कट–राज–सन्तु–चन्दन–गंड़ा–शकटान्न–पुरुषेष्वत्–द्ववेऽपि तदुपचारः[20]

उपर्युक्त आचार्यों के मतों को देखते हुए आचार्य भिखारी दास के द्वारा दी गई लक्षणा की परिभाषा पूर्ण नहीं है तो भी युक्तियुक्त प्रतीत होती है इन्होंने लक्षणा के रूढ़ि और प्रयोजनवती दो भेद किये हैं–[21] (क) शुद्धा (ख) गौणी।

''प्रयोजनवती जु लच्छना द्वै विधि तास प्रमान।
एक शुद्ध गौनी दुतिय भाषत सुकवि सुजान'' ।[22]

फिर उन्होंने शुद्धा के चार भेद बताए हैं–

1– उपादान 2–लक्षित 3–सरोपा 4–साध्य बसाना।

''उपादान अक जानिये दूजी लक्षित ठान।
तीजी सरोपा कहै चौथी साध्य वसान'' ।[23]

लेकिन मम्मट ने शुद्धा लक्षणा के दो भेद किए हैं।

1– उपादान लक्षणा

2– लक्षण लक्षणा।

प्रथम उपादान लक्षण तो वह है जो अपनी सिद्धि के लिए औरों का आक्षेप (ग्रहण) कर ले और दूसरी लक्षण लक्षणा वह है जहाँ कोई शब्द अन्य अर्थ की सिद्धि के लिए अपने को समर्पित कर दे।[24] मम्मट ने दूसरे प्रकार की लक्षणा का नाम सारोपा दिया है। इस लक्षणा में विषयी और विषय दोनों भिन्न होते हैं। जहाँ विषयी का विषय में आरोप किया जाता[25] और जब विषयी में विषय ऐसा लीन हो जाय की दोनों में भेद प्रतीति का अवसर ही न रह जाए तो वह साध्यवसाना लक्षणा होती है।[26] जहाँ सारोपा और साध्यवसाना लक्षणा के भेद सादृश्य द्वारा अथवा अन्य किसी सम्बंध द्वारा हो वहाँ उन्हें क्रमशः गौणी और शुद्ध लक्षणा समझा जाता है अर्थात् जहाँ विषयी और विषय की सादृश्य प्रतीति हो वहाँ गौणी सारोपा और साध्यवसान का उदाहरण मानना चाहिए तथा जहाँ पर अन्य सम्बंध हों वहाँ पर शुद्धा सारोपा और शुद्धासाध्यवसाना जानना चाहिए।[27] इस प्रकार मम्मट ने लक्षणा के छः भेद किए हैं। उपादान लक्षणा, लक्षण लक्षणा, शुद्धा सरोपा, शुद्धासाध्य वसाना, गौणी सरोपा और गौणी साध्य वसाना।

'पदार्थ निर्णय' 'विवेचन' में 'काव्यप्रकाश' का आधार लेते हुए भी आचार्य भिखारी दास जी ने भेदोपभेदा को 'काव्यप्रकाश' से कुछ भिन्न रखा है। यद्यपि भेदों के नामें में कोई विशेष अन्तर नहीं मालूम पड़ता।

(क) शुद्धालक्षणा–

(1) उपादान लक्षणा–आचार्य भिखारी दास के अनुसार उपादान लक्षणा वहाँ होती है जहाँ अर्थ सिद्धि के लिए दूसरों का गुण ग्रहण पड़ता है। उदा0 ''उपादान सो लच्छना परगुन लीन्है होई''।[28]

''कुंत चलत सब जग कहैं नर विनु चलै न सोई''[29] यहाँ कुंत (भाला) चलना का अर्थ है कुतधारियों द्वारा भाले चलाए जाना। इसी प्रकार मम्मट ने भी अपने उपादान लक्षणा के विवेचना में 'कुन्ताः प्रविशन्तिं 'यष्टयः प्रविशन्ति'' उदाहरण दिए गए हैं।[30] दास का उदाहरण भी मम्मट के इन्हीं उदाहरणों के आधार पर है। वस्तुतः उपादान लक्षणा में 'गुण ग्रहण करना' यह अशुद्धि प्रतीति होती है। सम्भवतः उन्होंने कुन्तधारियों का गुण कुन्त के द्वारा ग्रहण करना माना है, जो संस्कृत के आचार्यों की दृष्टि से शुद्ध नहीं माना जा सकता। दास ने निम्न उदाहरण द्वारा उपादान लक्षणा को स्पष्ट करने का प्रयास किया है–

''जमुना जल को जात ही डगरी गगरी जाल।
वजी वांसुरी कान्ह की गिरीं सकल तेहि काल।
खेलत ब्रज होरी सजैं बाजै बजै रसाल।
पिचकारी चलती धनीं तहं तहं उड़त गुलाल।।''[31]

इस उदाहरण की प्रथम पंक्ति में उपादान लक्षणा संस्कृत के आचार्यों के अनुसार मानी जा सकती है, परन्तु दूसरी पंक्ति में दास जी ने 'कान्ह' के बजाने का गुण बाँसुरी में आरोपित माना है, परन्तु सच्चाई यह है कि बाँसुरी के बजाने में मुख्यार्थ का कोई बोध नहीं है। इसी प्रकार तृतीय और चतुर्थ पंक्ति में भी है। इसी कारण इस सम्बंध में आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी का मत है कि उपादान लक्षणा लीजिए। इसका लक्षणा भी गड़बड़ है और इसी के अनुरूप उदाहरण भी अशुद्ध है।[32]

2– लक्षित लक्षणा–

ये लक्षणा वहाँ होती है, जहाँ कोई शब्द विशेष अर्थ–सिद्धि के लिए अपने को समर्पित कर दें,[33] जैसे–

'गंगा तट वासी कहैं गंगावासी लोग'[34]

में गंगावासी का अर्थ गंगा के प्रवाह में उसके मध्य निवास करने वालों से न होकर गंगा निवासियों से है। इनका यह उदाहरण भी मम्मट के 'गंगायां घोषः'[35] के ही आधार पर लिया गया है। यहाँ यह विचारणीय है कि दास ने लक्षणा का नाम लक्षित लक्षणा क्यों रखा जबकि मम्मट के लक्षण लक्षणा का प्रयोग किया है? व्याकरण की दृष्टि से दास का लक्षित–लक्षणा नाम अधिक संगत प्रतीत होता है।

3– सारोपा–

आचार्य भिखारी दास के मतानुसार जहाँ पर किसी भी प्रकार की समता होने पर एक शब्द का आरोप दूसरे में करने से अर्थ की सिद्धि हो वहाँ सारोपा लक्षणा होती है। द्रष्टव्य हैं–

''और थापिये और को क्यों छू समता पाई।
सरोपा सो लच्छना कहैं सकलकविराई।।''[36]

उदाहरण– ''मोहन मो दृगपूतरी का छवि सिगरी प्रान।
सुधा चितोनि सुहावनी मीचु वासुरी तान।।''[37]

यहाँ मोहन को आँख की पुतली, छवि को प्राण, चितवन को अमृत तथा बाँसुरी की तान को मृत्यु में आरोपित करने के कारण सारोपा लक्षणा है।

आचार्य मम्मट के अनुसार जहाँ विषयी तथा विषय में प्रकट रूप से भेद हों किन्तु वे एक ही आधार वाले कहकर निर्दिष्ट किये जाएँ वहाँ सारोपा लक्षणा होती है।[38] उदाहरणार्थ ''गौर्वाहीकः'' यह वाहीक जाति का मनुष्य गौ है यहाँ गौ तथा वाहीक में विभिन्नत्व है फिर भी दोनों में जड़ता, मंदता आदि एक ही आधार होने का कारण गौ (बैल) का आरोप वहीक में हुआ है। अतः यहाँ सारोपा लक्षणा है। इससे यह स्पष्ट पता चल रहा है कि भिखारी दास ने सारोप का लक्षण इस प्रकार लिखा है कि सारोपा शुद्धा और गौंणी दोनों में होती है।

4– साध्यवसाना–

आचार्य भिखारी दास का मानना है कि साध्यवसाना लक्षणा वहाँ होती है जहाँ विषय का नाम लेकर जिससे समता करनी हो उसे मुख्य कहा दिया जाय।

यथा–

''जाकी समता कहन को वहे मुख्य काहि देई।
साध्यं वसान सुलच्छना विषय नाम नाहि लेई।।'39

उदाहरण– ''बैरिन कहा बिछावती फिरि–फिरि सेज कृसान।
सुन्यो न मेरे प्रान धन चहत आज कहु जान।।''[40]

यहाँ सखी को बैरिन तथा सेज को कृसान कहाँ हैं। अतः यह साध्यवसाना लक्षणा हुई। आचार्य भिखारी दास ने इसकी परिभाषा ही बदल दी है और उपभेय के स्थान पर उपमान रख देने से साध्यवसाना लक्षणा का होना माना है पर बात ऐसी नहीं है।

मम्मट के अनुसार जहाँ विषयी का विषय में इस प्रकार अवसान अर्थात् लीनत्व हो कि दोनों के रूप में भेद ही न रह जाए तो वहाँ साध्यवसाना होती है। आचार्य भिखारी दास ने अपनी परिभाषा को अधिक व्यापक बनाने के उद्देश्य से उसे संक्षिप्त रखा है और इसीलिए साध्वसाना के लक्षण निरूपण में ये मम्मट से कुछ भिन्न हो गए है।

(ख) गौणी लक्षणा–

आचार्य भिखारी दास के अनुसार जहाँ गुणों के योग से लक्षणा का व्यापार होता है वहाँ गौणी लक्षणा होती है। यथा–

''गुनि लखि गौनी लच्छना द्वै विधि तासु प्रमान।
सारोपा प्रथमै गनो दूजी साध्यवसान।।''[41]

गौणी लक्षणा निम्नवत् दो प्रकार की होती है–

(1) सारोपा और (2) साध्वसाना।

(1) सारोपा गौणी–

गुण के अनुसार आचार्य भिखारी दास ने आरोपित लक्षणा को सारोपा गौणी लक्षणा कहा है। कहते है। यथा–

''सगुना रोप सुलच्छना गुन लखि करि आरोप।''[42]

दास ने इसका अत्युत्तम उदाहरण उपन्यस्त किया हैः–

''जैसे सब कोउ कहै, वृषभै गवई गोप।''[43]

अथवा

''सूर सरे करि मानिए, कायर स्यार विसेखि।
विद्यावान त्रिनयन हैं कूर अन्ध करि लेखि।।''[44]

यहाँ ग्रामवासी अहीरों को 'वृषभ' कहा गया है क्योंकि वे बैलों की भांति जड़मति एवं मंद बुद्धि होते हैं। इसी प्रकार वीरों को सिंह, कायरों को स्यार, विद्वानों को त्रिनेत्र तथा मूखों को अंधा उनके व्यक्तिगत गुणों के अनुसार ही कहा गया है। अतः यहाँ पर सारोपा गौणी लक्षणा हुई।

2– साध्यवसाना गौणी–

इसमें गुणानुसार केवल उपमान का ही उपमेय के स्थान पर प्रयोग होता है। जैसे–''गौनी साध्यवसान सो केवल ही उपमान।''[45]

उदाहरणार्थ– ''कहा वृषभ सो कहत हौ बातै है मतिमान।''[46]

यहाँ व्यक्ति के स्थान पर वृषभ रखने से यही तात्पर्य है कि उस व्यक्ति में वृभष के समान ही गुण है।

मम्मटाचार्य ने भी 'काव्य प्रकाश' के द्वितीय उल्लास में गौणी सारोपा तथा गौणी साध्यवसाना नाम के दो लक्षण बताते हुए कहा है कि जहाँ पर विषय और विषयी की सादृश्य प्रतीति हो वहाँ पर गौणी सारोपा और गौणी साध्यवसाना मानना चाहिए।[47] ये लक्षण और उदाहरण अधिक स्पष्ट प्रतीत होते हैं। मम्मट ने भी लक्षणा के ये ही भेदोपभेद कुछ अन्तर के साथ किए हैं। लेकिन जयदेव ने तो लक्षण के भेदोपभेदों की संख्या 36 बतायी है[48] जो भिखारी दास कृत संख्या से कई गुनी अधिक है।

3– व्यंजना–

व्यंजना शक्ति की व्याख्या करते हुए आचार्य भिखारी दास जी ने बताया है कि शब्द के सीधे अर्थ को छोड़कर जिस व्यापार द्वारा और ही अर्थ की प्रतीति होती है, उसे व्यंजना शक्ति कहते है।[49]

''सूधो अर्थ जुबचन को तेहितजि और बैन।
समुझि परै ते कहत है साक्ति व्यंजना ऐन।।''[49]

वस्तुतः इसका अर्थ यह है कि जहाँ अर्थ वाच्यार्थ और लक्ष्यार्थ से भिन्न जान पड़े, जैसा की जयदेव का मत[50] है वहाँ व्यंजना होती है परन्तु व्यंजना की यह वास्तविक परिभाषा दास जी के उक्त लक्षण से पूर्णतया स्पष्ट नहीं हो पायी।

आचार्य भिखारीदास जी ने व्यंजना के अंतर्गत अभिधामूलक और लक्षणामूल व्यंजना और तत्पश्चात दस व्यंजक की विवेचना की है।

(क) अभिधामूलक व्यंग्य–

आचार्य भिखारीदास के अनुसार यह व्यंग्य वहाँ होता है जहाँ पर अनेकार्थी शब्द का बिल्कुल दूसरा ही अर्थ निकलता हो।

यथा–''शब्द अनेकार्थन बल होई दूसरो अर्थ।
अविधामूलक व्यंग त हि भाषत सुकवि समर्थ।।''[51]

मम्मट ने अविधामूलक व्यंग्य का लक्षण इस प्रकार दिया है–

''अनेकार्थस्य शब्दस्य वाचकत्वे नियन्त्रिते।
संयोगाद्यरवाच्यार्थधीकृद् व्यापृतिरंजनम्।।''[52]

अर्थात् जब संयोग आदि द्वारा अनेकार्थी शब्द का एकार्थ नियमित हो जाए और फिर भी अन्य अर्थ की प्रतीति हो वहाँ पर यह (अभिधा मूलक) व्यंजना होती है। मम्मट के लक्षण को देखते हुए 'दास' की यह परिभाषा अपूर्ण–सी प्रतीत होती है।

(ख) लक्षणामूलक व्यंग्य–

आचार्य भिखारी दास ने लक्षणा मूलक व्यंग्य के दो भेद किए हैं–गूढ़ और अगूढ़

यथा–

''गूढ अगूढौ व्यंग द्वै होत लच्छना मूल।
छिपी गूढ प्रकटहिं कहौ है अगूढ़ सम तूल।।''53

उनकी व्याख्या करते हुए कहा है कि जो केवल सहृदय कवि ही समझ सके उस व्यंजना को गूढ़ और जो सब समझ सके उसे अगूढ़ कहते हैं।

''कवि सहृदय जा कहै लखै व्यंग कहावत गूढ़।
जाको सब कोई लखत सो पुनि होय अगूढ़।।''[54]

इन्होंने गूढ़ व्यंजना का निम्नलिखित उदाहरण दिया है–

''आनन में मुसकानि सहावनि वंकता नैनंह मांझ छई है।
बैन खुले मुकुले उर जात जकी बिथकी गति ठौनि ठई है।
दास प्रथा उलझै सब अंग सुरंग सुबासता फैलि गई है।
चन्द मुखी तन पाइ नबीनो भई तरुनाई आनन्द मई है।।''[55]

यहाँ गूढ़ व्यंग्य यह है कि जिसके पाने से स्वयं तरुणाई आनन्दित हुई है। उसे जो पुरुष भी प्राप्त करेगा उसे परमानन्द होगा। आनन में मुस्कान से नायिका के संकोच रहित होने के कारण अनुपम सौन्दर्यवती होने, नेत्रों में बाँकवन से उसके रीतिप्रिया होने, 'वैन खुलै' से उसके प्रेमालाप प्रिय होने, 'उर जात कै मुकुलाकार' होने से स्तन कठोर होने तथा स्पर्श मर्दन द्वारा अलौकिक सुख का अनुभव कराने वाले, ''प्रंभा उछलना' तथा सुरंग सुबासता' के फैलने से नायिका के सुरति आनन्द के लिए तात्पर्य रहने आदि' अनेक ऐसी बातों का बोध होता है जिन्हें केवल काव्य निपुण एवं सह्रदय व्यक्ति ही समझ सकता है, दूसरा कोई नहीं।

'साहित्य दर्पण' में कहा गया है कि जिस वृत्ति द्वारा लक्षणा के प्रयोजन का ज्ञान होता है उसे लक्षणामूला व्यंजना कहते हैं–

''लक्षणोपास्यते यस्य कृते तन्तु प्रयोजनम्।
यथा प्रत्याप्यते सा स्यादु व्यंजना लक्षणाश्रया।।''[56]

मम्मट ने इस लक्षणा को तीन प्रकार का कहा है–

1– बिना व्यंग्य वाली,
2– गूढ़ व्यंग्य वाली और
3– अगूढ़ व्यंग्य वाली।[57]

गूढ़ लक्षणा का उदाहरण दास तथा मम्मट एक सा ही है।

निष्कर्ष–

आचार्य भिखारी दास जी ने पदार्थ निर्णय के अन्तर्गत शब्द शक्तियों का सांगोपांग विवेचन किया है। इस विवेचन में अधिकतर उन्होंने आचार्यों के मतानुसार ही व्याख्याएँ की हैं, लेकिन वे उनके मतों से सहमत रहे ऐसी बात नहीं है। जहाँ उन्होंने उचित समझा वहाँ वे उनसे भिन्न भी हो गए जैसा उन्होंने लक्षणा विवेचन में भेदोपभेदों के वर्गीकरण में दिखाया है। कहीं–कहीं उन्होंने भेदोपभेदों के नामें में भी, आचार्यों द्वारा निर्दिष्ट नामों को देखते हुए परिवर्तन कर लिया है जैसे लक्षणा के स्थान पर लक्षित लक्षणा कहीं–कहीं अपने विषय को अधिक स्पष्ट करने तथा उसे रसिकों एवं पाठकों के लिए अधिक बोधगम्य बनाने के लिए उन्हें सुन्दर कल्पनाओं का सहारा भी लेना पड़ा है। आचार्य दास का यह पद इस बात का साक्षी है–

''वाचक लच्छक भाजन रूप है व्यंजक को जल मानत ज्ञानी।
जानि परै न जिन्है तिन्ह के समुझाइवे को यह दास बखानी।
य दोऊ होत अव्यंग्य सव्यंग और व्यंग्य इन्हें विनु लावै न बानी।
भाजन लाइय नीर विहीन न आई सकै बिनु भाजन पानी।।''[58]

यहाँ पर वाचक और लक्षक एवं व्यंजक शब्दों का भेद दास जी ने दैनिक वस्तुओं की उपमा से सरलता पूर्वक समझाने का प्रयास किया है। जिसमें सफल रहे। उनका कथन है कि वाचक और लक्षक जलपात्र के समान है तथा व्यंजक जल के समान मनुष्य की प्यास जल से बूझती है, न की जल पात्र से और जल पात्र में ही लायां तथा पिया जा सकता है। अतः व्यंजना अभिव्यक्ति व उसका रसास्वादन वाचक और लक्षक द्वारा ही किया जा सकता है। यद्यपि खाली पात्रों की भाँति वाच्यार्थ और लाक्ष्यार्थ का भी अपना उपयोग है। ये दोनों अव्यंग्य तथा सव्यंग्य होते हैं। परन्तु इसमें व्यंग्य का चमत्कार वाणी द्वारा ही पैदा होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1–काव्य निर्णयः पृष्ठ–7

2–''स्याद्वाचको लाक्षणिकः शब्दोऽत्र व्यजंकस्तथा। काव्य प्रकाशः सूत्र–5

3–''तात्पर्यार्थेऽपि केषुचित्। ''यथोपरि; सूत्र–7

4–काव्यनिर्णयः पृष्ठ–14

5–यथोपरि; पृष्ठ–7

6–यथोपरि; पृष्ठ–7

7–यथोपरि; पृष्ठ–8

8–यथोपरि; पृष्ठ–8

9–काव्य प्रकाश; पृष्ठ–11

10–काव्यनिर्णय; पृष्ठ–8, 9, 10

11–काव्य प्रकाशः सूत्र–32 का श्लोक चन्द्रालोकः

12–चन्द्रालोक पृष्ठ–296

13–काव्य निर्णय : पृष्ठ–10

14–यथोपरि; पृष्ठ–10

15–काव्य प्रकाश : सूत्र–12

16–काव्य निर्णय : पृष्ठ–11

17–''शब्दव्यापारतो यस्य प्रतीतिस्तस्य मुख्यता। अर्थापसेपस्य पुनर्लक्ष्यामाणत्वमुच्यते मुकुटभट्टं अभिधावृत्तिमात्रृका।।'' अभिधा वृत्तिका से उद्धृत

18–महाभाष्यः 4/1/48

19–चन्द्रालोक : पृष्ठ–263, 266

20–न्यायदर्शन, अध्याय। 2 आह्नि 2 सूत्र 64

21–''रूढि और प्रयोजनवती द्वै लच्छनी उदोत'' काव्य निर्णय : पृष्ठ–11

22–काव्य निर्णय : पृष्ठ–12

23–काव्य निर्णय : पृष्ठ–12

24–काव्य प्रकाशः सूत्र–13

25–''सारोपान्या तु यत्रोक्तौ विषयी विषयस्तथा।।'' यथोपरि; सूत्र–14

26–''विषय्यन्तः कृतेऽन्यस्मिन् सा स्यात्साध्यवसानिका। यथोपरि; सूत्र–15

27–यथोपरि, सूत्र–16

28–काव्य निर्णयः सूत्र–15

29–यथोपरि

30–काव्य प्रकाशः पृष्ठ–19

31–काव्य निर्णय : पृष्ठ–13

32–हिन्दी साहित्य का इतिहासः आचार्य रामचन्द्र शुक्ल पृष्ठ–241–242

33–''निज लच्छन औरहि दिये, लच्छ लच्छना जोग। काव्य निर्णयः पृष्ठ–131

34–यथोपरि, पृष्ठ–13

35–काव्य प्रकाशः पृष्ठ–20

36–काव्य निर्णयः पृष्ठ–13

37–काव्य निर्णयः पृष्ठ–14

38–''आरोप्यमाणः आरोपविषयश्च मत्रानपहुनुत भेदौ।
समानाधिकरण्येन निर्दिश्येते सा लक्षणा सारोप।।'' काव्य प्रकाशः पृष्ठ–23

39–काव्य निर्णयः पृष्ठ–14

40–यथोपरि,
41–काव्य निर्णयः पृष्ठ–14
42–यथोपरि,
44–यथोपरि, पृष्ठ–15
45–यथेपरि, पृष्ठ–15
46–यथोपरि, पृष्ठ–15
47–''भैदा विभौ च सादृश्यात्तसम्बन्धान्तरतस्तथा।
गौणी शुद्धौ च विज्ञेयौ....।।'' काव्य प्रकाशः द्वितीय उल्लासः सूत्र–15
48–''चन्द्रा लोकः पृष्ठ–269–270 चन्द्रालोकः पृष्ठ–271 पृष्ठ–272–273
49–काव्य निर्णयः पृष्ठ–16
50–जयदेव
51–काव्य निर्णय : पृष्ठ–16
52–काव्य प्रकाश : पृष्ठ–34–35
53–काव्य प्रकाश : पृष्ठ–16
54–यथोपरि,
55–यथोपरि, पृष्ठ–15–16
56–साहित्य दर्पण : पृष्ठ–55
57–''अव्यंग्या गूढ़ व्यंग्या अगूढ़ व्यंग्या च।'' काव्य निर्णयः पृष्ठ–30
58–काव्य निर्णयः पृष्ठ–16